उर्दू कहानी की प्रगतिशील परम्परा

डॉ. इशरत खान
रीडर हिन्दी, विभाग, गोवा विश्वविद्यालय

उर्दू गद्य विधाओं में कहानी विधा का एक गौरवमय इतिहास रहा है। उर्दू में पहले छोटी-छोटी दास्तानें कही जाती थीं। इसी में उर्दू कहानी का प्रारम्भिक रूप मिलता है। उन्नीसवीं शताब्दी यदि दास्तानों की शताब्दी कही जाए तो शायद अतिशयोक्ति नहीं होगी। इस सदी का उत्तरार्ध दास्तान-लेखन के उत्कर्ष का काल था।

उर्दू में कहानी का प्रारम्भ भी प्रेमचन्द से होता है। उनकी पहली कहानी 'दुनिया का सबसे अनमोल रतन' १९०७ में लिखी गई जो जमाना पत्रिका में प्रकाशित हुई। बड़े घर, की बेटी, पंच परमेश्वर, अमावस की रात, शतरंज के खिलाड़ी आदि प्रेमचन्द की लोकप्रिय उर्दू कहानियाँ हैं। इनके समकालीन कहानीकार थे - 'सज्जाद हैदर यलदरम'। इन्होंने तुर्की कहानियों का उर्दू में अनुवाद भी किया और स्वयं भी उर्दू में कहानियाँ लिखीं।

प्रेमचन्द के अन्य समकालीन कहानीकारों में नियाज़ फतहपुरी, सुल्तान हैदर जोश, नज़र सज्जाद हैदर और मजनूँ गोरखपुरी ने प्रेम और सौन्दर्य से परिपूर्ण कहानियाँ लिखीं हैं।

प्रेमचन्द की परम्परा में ही सुदर्शन आज़म करेवी, अली अब्बास हुसौनी और सुहेल अज़ीमाबादी आते हैं। सुदर्शन ने हिन्दू समाज को लक्षित करके अनेक सुधारवादी कहानियाँ लिखीं। 'शाइर', गुरूमंतर, मुसव्विर तथा 'बाप' उनकी प्रमुख कहानियाँ हैं।

सज्जाद जहीर, मुल्कराज आनन्द, ज्योतिघोष, के. एम भट, एस. सिन्हा और मुहम्मद दीन तासीर ने लंदन में (१९२५) प्रगतिशील आन्दोलन का प्रारम्भ किया। इसी के तहत भारतवर्ष के प्रगतिशील लेखकों ने १९३६ में 'प्रगतिशील लेखक संघ' की स्थापना की। इस प्रकार हिन्दी-उर्दू में प्रगतिशील कहानियाँ लिखी जाने लगी। लेकिन उर्दू में प्रगतिशील कहानियों में अंगारे (१९३२) कहानी संग्रहका महत्त्वपूर्ण योगदान रहा है। इस सन्दर्भ में एहते शामे हुसैन लिखते हैं - "राजनीतिक जागृति के बढ़ने और अन्तर्राष्ट्रीय विचारों के फैलने के कारण कई नवयुवकों ने साहित्य में भी चेतनापूर्वक क्रांति पैदा करने के विचार प्रकट किये थे, अतएव सैयद सज्जाद ज़हीर, रशीद जहाँ, अहमद अली और महमूदुल ने अपनी कुछ कहानियों का एक संग्रह 'अंगारे' के नाम से १०३३ ई. में लखनऊ से प्रकाशित कराया, जो बम के गोले के समान भारतीय समाज पर फटा और लोग तिलमिला उठे। सरकार ने उस पर प्रतिबंध लगा दिया, परन्तु उसके प्रकाशित करने का जो उद्देश्य था, वह पूरा हो गया। उसमें असंतुलित और भावुक ढंग से धर्म, रीति-रिवाज, नैतिक आदर्शों और यौवन-संबंधी विचारों पर खुलकर चोट की गयी थी।"

सज्जाद जहीन ने 'अंगारे' में एक छोटी-सी कहानी 'दुलारी' लिखी थी। इसके पश्चात इस क्षेत्र में सआदत हसन मंटो, कृश्न चंदर, राजिन्दर सिंह बेदी, अहमद नदीम कासमी, इस्मत चुगताई और कुर्रतुल-ऐन-हैदर की कहानियों में प्रेमचन्द की यथार्थवादी परम्परा की अगली कड़ियाँ देखी जा सकती हैं।

उर्दू कथा-साहित्य को जिन लेखकों ने यथार्थवाद की चरम सीमा तक पहुँचाया है, उनमें 'सआदत हसन मंटो' का महत्त्वपूर्ण स्थान है। एक

मामूली-सी घटना को एक जानदार कहानी में तब्दील करने का हुनर मंटो के पास ही था। यह ध्यान देने की बात है कि जिस समय मंटो ने लिखना प्रारम्भ किया, उस समय उर्दू का कथा साहित्य आदर्शवाद से आगे न बढ़ सका था। यह आदर्शवाद भी क्रांतिकारी किस्म का न था बल्कि नजीर अहमद और राशिदुल खौरी की परम्परा में वैयक्तिक व्यवहार के सुधार की ओर था। प्रेमचन्द के प्रभाव से उसमें सामाजिक चेतना के अंकुर भी फूट रहे थे। लेकिन मंटो ने इससे आगे की मंजिल-सामाजिक क्रांति-दृष्टि को एकदम से फलाँग कर तत्कालीन यूरोपीय साहित्य से प्रेरणा प्राप्त की जो फ्रायड के मनोविज्ञान और लैंगिक मनोविकारों पर आधारित था। वासनाओं में डूबे हुए युवकों और युवतियों, वेश्याओं और समाज के गिरे हुए लोगों का चित्रण मण्टू से बढ़कर अब तक उर्दू का कोई कलाकार नहीं कर सका है।

मंटो की 'टोबा टेकसिंह' विभाजन के विषय पर, हिन्दी-उर्दू में लिखी गई चन्द बेहतरीन कहानियों में से एक है। अपनी धरती से एक गहरा लगाव इस कहानी की केन्द्रीय विषय वस्तु है। मंटो ने मुख्य पात्र बिशन सिंह उर्फ टोबा टेकसिंह में भावों की इतनी ऊर्जा भर दी है कि वह एक यादगार चरित्र बन गया है। उसका गाँव ही टोबा टेकसिंह, उसके नाम का पर्याय हो जाता है। हिन्दुस्तान-पाकिस्तान के मध्य वह अपने गाँव को ढूँढ़ता है। अपनी समस्या का समाधान न होते हुए वह ज़मीन के उस टुकड़े पर गिर जाता है जिसका कोई नाम नहीं है। इस सन्दर्भ में कहानी की अन्तिम पंक्तियाँ संवेदना से भरपूर हैं - "सूरज निकलने से पहले साकत व सामित बिशन सिंह के हलक़ से एक फ़लक शिगाफ चीख निकली इधर उधर कोई अफसर दौड़े आये और देखा कि वह आदमी जो पन्द्रह बरस तक दिन-रात अपनी टांगों पर खड़ा रहा, औंधे मुँह लेटा था। उधर खारदार तारों के पीछे इधर वैसे ही तारों के पीछे हिन्दुस्तान था - पाकिस्तान जिस का कोई नाम नहीं था, टोबा टेकसिंह पड़ा था।"

दरम्यान में जमीन के इस टुकडे पर मंटो की कुछ कहानियाँ 'काली शलवार', 'बू', 'ठंडा गोश्ता', 'खोल दो', 'ऊपर-नीचे' और 'दरम्यान' जैसी कहानियों पर मुकद्दमे भी चलाए गए। लेकिन सहित्य तो किसी मुकद्दमे का मोहताज नहीं होता।

इसके पश्चात कृश्न चन्दर (१९१४-१९७७) ने उर्दू कहानी को एक नया मोड़ दिया। उन्होंने उर्दू-कहानी को किसान-मजदूर अन्दोलन एवं अन्य सामाजिक समस्याओं से जोड़ दिया। 'कालू भांगी एक्सप्रेस' पूरो चाँद की रात', आदि इनकी चर्चित कहानियाँ हैं - फिराक गोरखपुरी कृश्न चन्दर के कथासाहित्य की विशेषताओं को रेखांकित करते हुए कहते हैं - "एक तो उनकी सार्वभौमिक दृष्टि और जागरूक बौद्धिकता और दूसरी उनकी विशिष्ट टेकनीक। जहाँ तक जागरूक बौद्धिकता का प्रश्न है, क्रिश्न चन्दर को कथाक्षेत्र में वही स्थान प्राप्त है, जो अली सरदार जाफरी को काव्य-क्षेत्र में। उनकी कहानियों की सर्जनात्मक दृष्टि विशाल भी है और स्पष्ट भी। वे जागरूक समाजवादी हैं, साथ ही उनका परिप्रेक्ष्य भी इतना विस्तृत है जितना और किसी कथाकार का नहीं हुआ।"

उर्दू कहानी के एक प्रमुख हस्ताक्षर राजिन्दर सिंह बेदी हैं (१९१५-१९८४)। इनकी अधिकतर कहानियाँ विभाजन की पृष्ठभूमि पर लिखी गईं हैं। बेदी की पहली कहानी 'महारानी का तोहफा' १९३६ में 'अदबी दुनिया' नामक पत्रिका में प्रकाशित हुई थी। इसके तीन साल बाद उनका पहला कहानी-संग्रह 'दाना-ओ-दाम' सामने आया जिसने उन्हें उर्दू के तरक्की पसंदों के बीच चर्चा के केन्द्र में ला दिया। इनकी 'कल्याणी' एवं 'लाजवन्ती' कहानियाँ अत्यन्त चर्चित रही हैं। लाजवन्ती कहानी के संबंध

में जानकी प्रसाद शर्मा के विचार इस प्रकार हैं - 'विभाजन की पृष्ठभूमि पर आधारित, 'लाजवन्ती' कहानी भी स्त्री की पीड़ा को आवाज़ देती है। यह कहानी इसलिए महत्त्वपूर्ण नहीं है कि इसमें विभाजन की विभीषिका का हृदयविदारक चित्रण है बल्कि इसलिए है कि यह समाज में स्त्री की जगह के मुद्दे को लेकर हमारी सोच को झकझोरती है। सुन्दरलाल की अपहृत पत्नी लाजवन्ती, भारत और पाकिस्तान, के बीच औरतों के तबादले में वापस तो आ जाती हैं लेकिन वह सुन्दरलाल के लिए वही पुरानी लाजो नहीं रह जाती जो गाजर से लड़ पड़ती और मूली से मान जाती थी। विडम्बना यह है कि सुन्दरलाल अपहृत औरतों को 'दिल में बसाओ' प्रोग्राम का सेक्रेटरी है लेकिन ऐसा वह खुद नहीं कर पाता।"

अहमद नदीम कासमी एक कहानीकार के साथ-साथ मशहूर शाइर भी हैं। प्रगतिशील साहित्यान्दोलन से उनका नज़दीकी सम्बन्ध रहा है। कासमी की कहानियों में एक स्पष्ट वैचारिक सन्देश निहित रहता है। वे यथार्थ की किसी भी तरह की पर्दापोशी को स्वीकार नहीं करते बल्कि यथार्थ के हर पहलू को वैज्ञानिक चेतना के परिप्रेक्ष्य में उभारने की कोशिश करते हैं। उदाहरण के तौर पर अलहम्द-लिल्लाह' कहानी में कहानीकार, धार्मिक आस्था और वस्तुगत यथार्थ के द्वन्द्व को बहुत ही प्रभावी ढंग से बयान करता है।

उर्दू कहानी में महिलाओं का भी महत्त्वपूर्ण योगदान रहा है। इन महिलाओं की कहानियों में प्रगतिशील स्वर ज़ोर शोर से सुनाई देते हैं। इस संदर्भ में मुशरफ आलम जौकी का कहना है-"लेखन की सतह पर बग़ावत करनेवाली महिलाओं की खोज शुरू हुई तो मेरी निराशा, धीरे-धीरे एक खुशगवार आशा की किरन में बदलती चली गई क्योंकि लेखन के शुरूआती सफर में ही इन मुस्लिम महिलाओं ने जैसे मर्दों की वर्षों पुरानी हुक्मरानी के तौक़ को अपने गले से उतार फेंका था। ये महज़ इत्तेफाक नहीं है कि मुस्लिम महिलाओं ने जब कलम संभाला तो अपनी कलम से तलवार का काम लिया। इस तलवार की ज़द पर पुरुषों का, अब तक का समाज था। वर्षों की गुलामी थी। भेदभाव और कुंठा से जन्मा, भयानक पीड़ा देनेवाला अहसास था। रशीद जहां से लेकर मुमताज शीरीं, इस्मत चुग़ताई, वाजदा तबस्सुम, रुक़ैया सख़ावत हुसैन, तस्लीमा नसरीन, तहमीना दुर्रानी, कुर्रतुल-एन-हैदर, फहमीदा रियाज और किश्वर नाहीद तक ये औरतें शताब्दियों के इतिहास में स्वयं को नंगा देखते हुए जब चीत्कार करती हैं तो कलम इतनी तीखी, पैनी और नंगी बन जाती है कि मर्दाना समाज को डर महसूस होने लगता है। प्रगतिशील महिला कथाकारों में इस्मत चुगताई (१९१२-१९९२) का महत्त्वपूर्ण स्थान है। इस्मत का सम्बन्ध अर्द्धसामन्तीय परिवार से था। उनके परिवार के अर्द्धसामन्तीय परिवेश और रख-रखाव ने इस्मत के जेहन में सृजन के बीज बोए। इस्मत ने महसूस किया कि इस माहौल में विशेष रूप से एक स्त्री के लिए स्वाधीन और उन्मुक्त जीवन बिताना दिवास्वप्न की भाँति है। यहीं से उनके भीतर एक बागियाना सोच के कथाकार ने जन्म लेना शुरू किया। उनकी 'लिहाफ', 'जड़ें' दोजखी' और 'बच्छो फूफी कहानियाँ' चर्चित रहीं हैं।

'लिहाफ़' इस्मत की सर्वाधिक चर्चित कहानी है। इस कहानी को लेकर इस्मत पर १९४४-४५ में लाहौर की एक अदालत में मुकद्दमा चला। वास्तव में यह अर्द्धसामन्तीय पेरिवेश में अपने नवाब पति के प्रेम से वंचित एक स्त्री की दुखभरी कहानी है। कहानीकार का उद्देश्य उस व्यवस्था का पर्दाफ़ाश करना है जो स्त्री को प्रवर्जन की ओर ढकेलती है। उसने एक अबोध बच्ची की आँख से उस भयानक यथार्थ को दिखाना चाहा है जिसकी चर्चा हमें अशालीन

और अभद्र बनाती है।

कुर्रतुल-ऐन-हैदर (जन्म १९२७) उर्दू की जानी-पहचानी कथाकार हैं। वह कहानीकार की अपेक्षा उपन्यासकार के रूप में अधिक विख्यात है। उनका 'आग का दरिया' उपन्यास क्लासिक की श्रेणी में आता है। 'पतझड़ की आवाज', 'हस्ब-नस्ब', 'हाजी गुल बाबा बेकताशी के मलफूजात', अगले जनम मोहे बिटियाँ न की जो', 'दिलरुबा' और एक लड़की की जिन्दगी, आदि इनकी बहुचर्चित कहानियाँ हैं।

'हस्ब-नस्ब' कहानी में कुर्रतुल एक समाजशास्त्री की भूमिका में उतर आती है। इसकी विषयवस्तु के मूल में श्रेष्ठ कुल 'हस्ब-नस्ब' के मिथ्याभिमान और नवधनाढ्य वर्ग की मूल्यहीनता का अन्तर्विरोध है। छम्मी बेगम अपनी कुलीनता की रक्षा के प्रति अतिरिक्त रूप से सावधान है। लेकिन उसे आभास भी नहीं हो पाता कि यह कुलीनता यथार्थ के थपेड़ों से कब की चकनाचूर हो चुकी है। अज्जू मियॉ के धोखा देने के बाद भी वह जुगादरी रोहिला सरदारों के नाम लेवा इस कुनबे की कुलीनता और प्रतिष्ठा को बचाने के लिए किलाबन्द होकर बैठी रही। लेकिन एक-एक करके उसका सहारा छूटता जाता है। शाहजहाँ पुर से दिल्ली और बम्बई शहर-दर शहर भटकती हुई अन्ततः एक तथाकथित सम्भ्रान्त वर्ग की महिला के यहॉ उसे पनाह मिलती है जो अपनी सम्भ्रांतता की ओट में देह व्यापार करती है। छम्मी बेगम इस बात पर खुश है कि इस घर में इज्ज़तदार लोग आते हैं। वह अपनी मालकिन के वास्तविक चरित्र से वाक़िफ नहीं है। वह शुक्र अदा करती है कि खुदा ने उसे अच्छे लोगों के बीच भेजकर उसकी लाज बचा ली। यह हमारे समाज की एक बड़ी विडम्बना को लक्षित करनेवाली कहानी है। 'अगले जनम मोहे बिटिया न की जो', दिलरूबा' और 'एक लड़की की जिंदगी' तीनों उपन्यास हैं लेकिन इनको दीर्घ कहानी में भी समाविष्ट किया गया है। इन तीनों दीर्घ कहानियों में आजादी के बाद के समाज में स्त्री की स्थिति को रेखांकित किया गया है। अगले जनम मोहे बिटिया न कीजो' मामूली नाचने-गानेवाली दो बहनों की कहानी है । जो बार-बार मेंदी के छलावे का शिकार होती है। फिर भी यह कहानी जागीरदार घरानों के आर्थिक ही नहीं भावात्मक खोखलेपन को भी जिस तरह उभारकर सामने लाती है उसकी मिसाल उर्दू साहित्य में मिलना ही मुश्किल है। एक जागीरदार घराने आशा फरहाद, पच्चीस साल के बाद भी रश्के-कमर को भूल नहीं पाते हैं। और वह, उसके लिए धनदौलत का बन्दोबस्त न करके केवल कुछ गजलों का बन्दोबस्त करते हैं ताकि "अगर तुम वापस आओ और मुशायरों में मदऊ किया जाए तो ये गजलें तुम्हारे काम आएँगी।" आखिर सब कुछ लुटने के बाद 'कमर' के पास बचता है तो बस यही कि 'कुर्तो की तुरपाई की, कुर्ता दस पैसे"। कहानी का शीर्षक ही हमारे समाज में औरत के हालात पर एक गहरी चोट करता है। जमीदारों का युवावर्ग, इनके साथ खूब मौज-मस्ती करता है और जरा-सा आरोप लगने पर कहते हैं, "इस तबक़े की छोकरियों के पास ब्लैकमेल का यह सरल नुस्खा है। किसी आए-गए की औलाद, किसी मालदार परिचित शनासा के सिर मँढ दी।" 'रश्के कमर की छोटी अपंग बहन जमीलन्निसा का चरित्र उसका धीरज, उसका व्यक्तियों को पहचानने का गुण और हालात का सामना करने का हैसला मन को सराबोर भी कर जाता है।

निष्कर्ष रूप से कहा जा सकता है कि मंटो की भावनात्मकता, कासमी की राजनीतिक चेतना, इस्मत का विद्रोही स्वर और कुर्रतुल-ऐन-हैदर का सांस्कृतिक बोध मिलकर, उर्दू-कहानी की प्रगतिशील परम्परा को समृद्ध करता है।

❖ ❖ ❖